Universal Research Reports
ISSN: 2348-5612 | Vol. 12 | Issue 2 | Apr- Jun 25 | Peer Reviewed & Refereed

गांधीजी के सामाजिक चिंतन में शिक्षा का स्वरूप और उद्देश्य

डॉ. विनीता प्रिया
एम. ए. (इतिहास), एम. ए. (शिक्षा), पी एच. डी.
माध्यमिक शिक्षक (सामाजिक विज्ञान), राजकीयकृत +2 उच्च विद्यालय ओहारी (नवादा, बिहार)
Email - vinitapri0@gmail.com
Accepted: 13/06/2025 Published: 28/06/2025

सारांश

महात्मा गांधी के सामाजिक चिंतन में शिक्षा का स्वरूप और उद्देश्य केवल साक्षरता तक सीमित नहीं था, बल्कि यह व्यक्ति के नैतिक, बौद्धिक, शारीरिक और सामाजिक विकास का समग्र माध्यम था। गांधीजी का मानना था कि शिक्षा का मुख्य लक्ष्य ऐसे नागरिक तैयार करना है जो आत्मनिर्भर, जिम्मेदार, सत्यनिष्ठ और समाज के प्रति सेवा-भाव रखने वाले हों। उन्होंने 1937 के वर्धा शिक्षा सम्मेलन में 'नई तालीम' की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसमें शिक्षा को श्रम, उत्पादन और जीवनोपयोगी कौशल से जोड़ने पर जोर दिया गया। उनके अनुसार, मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा, कार्य और शिक्षा का एकीकरण, नैतिक मूल्यों का समावेश, तथा ग्राम स्वराज की दिशा में प्रशिक्षित करना, शिक्षा के मूल उद्देश्य होने चाहिए। गांधीजी ने शिक्षा को केवल आर्थिक साधन के रूप में नहीं, बल्कि व्यक्ति के चरित्र निर्माण, सामाजिक समरसता, आत्मसंयम, और सतत विकास के साधन के रूप में देखा। उन्होंने स्पष्ट किया कि वास्तविक शिक्षा वह है जो व्यक्ति को सोचने, समझने और सही निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करे, साथ ही उसमें सेवा और सहयोग की भावना विकसित करे। आज के संदर्भ में भी गांधीजी का शिक्षा संबंधी दृष्टिकोण अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि यह शिक्षा को रोजगार-केंद्रित दृष्टिकोण से आगे बढ़ाकर उसे जीवन-केंद्रित और समाजोपयोगी बनाता है, जो स्थायी शांति, सामाजिक न्याय और मानवीय मूल्यों की स्थापना में सहायक है।

प्रमुख शब्द: महात्मा गांधी, सामाजिक चिंतन, शिक्षा का स्वरूप, शिक्षा का उद्देश्य, नई तालीम, मातृभाषा में शिक्षा

परिचय

महात्मा गांधी के सामाजिक चिंतन में शिक्षा को एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, क्योंकि उनके अनुसार शिक्षा केवल साक्षरता या जानकारी का संग्रह नहीं, बल्कि यह व्यक्ति के **संपूर्ण व्यक्तित्व विकास** का माध्यम है। गांधीजी का मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करना है जो न केवल बुद्धिमान हों, बल्कि नैतिक, आत्मनिर्भर और समाज के प्रति जिम्मेदार भी हों। उन्होंने 1937 के वर्धा शिक्षा सम्मेलन में '**नई तालीम**' की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसमें शिक्षा को जीवनोपयोगी कार्यों, श्रम, और उत्पादन से जोड़ने पर बल दिया गया। उनके विचार में प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में दी जानी चाहिए, ताकि छात्र अपने सांस्कृतिक परिवेश और जड़ों से जुड़े रहें। गांधीजी ने शिक्षा में **नैतिकता, आत्मसंयम, सेवा भावना और सामाजिक सहयोग** जैसे तत्वों को अनिवार्य माना। उनके अनुसार, ऐसी शिक्षा ही समाज में समानता, आत्मनिर्भरता और ग्राम स्वराज की स्थापना में सहायक होगी। आधुनिक

© 2025 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

समय में जब शिक्षा मुख्यतः रोजगार-उन्मुख हो गई है, गांधीजी का शिक्षा-दर्शन हमें यह याद दिलाता है कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल आर्थिक प्रगति नहीं, बल्कि **चरित्र निर्माण**, **सामाजिक समरसता**, और **मानवीय मूल्यों** की स्थापना है, जो स्थायी शांति और सतत विकास के लिए आवश्यक हैं।

मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा का महत्व

महात्मा गांधी के शिक्षा-दर्शन में मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था, क्योंकि उनका मानना था कि भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि व्यक्ति की सोच, संस्कृति और भावनात्मक विकास की आधारशिला होती है। गांधीजी का तर्क था कि प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में देने से बच्चों में सहज समझ विकसित होती है, जिससे वे न केवल विषय-वस्तु को बेहतर तरीके से आत्मसात कर पाते हैं, बल्कि अपनी सांस्कृतिक जड़ों और परंपराओं से भी गहरा जुड़ाव महसूस करते हैं। विदेशी भाषा में शिक्षा प्रारंभ करने से, विशेषकर प्रारंभिक स्तर पर, बच्चों में बौद्धिक बोझ बढ़ जाता है और वे अपनी रचनात्मकता को पूर्ण रूप से व्यक्त नहीं कर पाते। गांधीजी का मानना था कि मातृभाषा में शिक्षा से बालक में आत्मविश्वास और अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास होता है, साथ ही यह सामाजिक समरसता को भी बढ़ावा देती है क्योंकि शिक्षा स्थानीय जीवन, रीति-रिवाज और समाज की आवश्यकताओं के साथ सीधे जुड़ जाती है। इसके अतिरिक्त, मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा देने से ज्ञान का लोकतंत्रीकरण संभव होता है, क्योंकि इससे ग्रामीण और वंचित वर्ग के बच्चे भी आसानी से शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। गांधीजी के अनुसार, जब तक शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से जीवन से जुड़ी नहीं होगी, तब तक वह व्यक्ति को आत्मनिर्भर, रचनात्मक और समाजोपयोगी बनाने में सफल नहीं हो सकती। इस प्रकार, मातृभाषा आधारित प्रारंभिक शिक्षा न केवल शैक्षिक गुणवत्ता को बढ़ाती है, बल्कि यह चरित्र निर्माण, सांस्कृतिक संरक्षण और समाज के सर्वांगीण विकास के लिए भी अनिवार्य है।

शिक्षा का नैतिक एवं आध्यात्मिक उद्देश्य

गांधीजी के अनुसार शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य केवल ज्ञानार्जन या व्यावसायिक कुशलता प्राप्त करना नहीं है, बल्कि व्यक्ति के भीतर नैतिक मूल्यों और आध्यात्मिक चेतना का विकास करना है। उनका मानना था कि यदि शिक्षा केवल बौद्धिक विकास तक सीमित रहे और व्यक्ति के चरित्र, आचरण तथा जीवन-दृष्टि को न बदले, तो वह अधूरी है। नैतिक उद्देश्य का अर्थ है कि शिक्षा के माध्यम से सत्य, अहिंसा, करुणा, ईमानदारी, अनुशासन, सेवा-भाव और आत्मसंयम जैसे गुणों का विकास हो। यह शिक्षा व्यक्ति को सही और गलत का विवेक देती है तथा उसे समाज के प्रति अपने कर्तव्यों के लिए जागरूक बनाती है।

आध्यात्मिक उद्देश्य के तहत गांधीजी यह मानते थे कि शिक्षा व्यक्ति के भीतर परमात्मा के प्रति श्रद्धा, आत्मचिंतन, और जीवन के गहरे अर्थ की खोज की प्रवृत्ति उत्पन्न करे। उनका विचार था कि आध्यात्मिकता का अर्थ किसी विशेष धार्मिक मत का पालन नहीं, बल्कि सार्वभौमिक सत्य और नैतिकता को आत्मसात करना है। शिक्षा के माध्यम से मनुष्य में आत्मज्ञान, सहिष्णुता और सभी प्राणियों के प्रति सम्मान की भावना विकसित होनी चाहिए।

OPEN ACCESS
© 2025 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

गांधीजी के विचार में नैतिक और आध्यात्मिक शिक्षा एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं; नैतिकता जीवन में बाहरी आचरण को शुद्ध करती है, जबकि आध्यात्मिकता आंतरिक चेतना को पवित्र बनाती है। इस प्रकार, ऐसी शिक्षा से ही ऐसा नागरिक तैयार होता है जो न केवल अपने व्यक्तिगत जीवन में सच्चा और ईमानदार हो, बल्कि समाज और राष्ट्र की सेवा के लिए समर्पित भी हो।

चरित्र निर्माण और व्यक्तित्व विकास में शिक्षा की भूमिका

गांधीजी के अनुसार शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल पुस्तकीय ज्ञान देना या रोजगार प्राप्ति का साधन बनाना नहीं है, बल्कि मनुष्य के चरित्र का निर्माण और उसके संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास करना है। उनका मानना था कि शिक्षा के माध्यम से ऐसे आदर्श नागरिक तैयार होने चाहिए, जिनमें सत्य, अहिंसा, ईमानदारी, सेवा-भाव, अनुशासन, धैर्य और करुणा जैसे गुण रचे-बसे हों। गांधीजी का विचार था कि ज्ञान का मूल्य तभी है जब वह चरित्र में परिवर्तित होकर जीवन में सकारात्मक बदलाव लाए। चरित्र निर्माण के लिए शिक्षा का कार्य केवल नैतिक उपदेश देना नहीं है, बल्कि विद्यार्थियों को ऐसा वातावरण और अवसर प्रदान करना है जिसमें वे अपने व्यवहार, निर्णय और कर्म में नैतिकता को आत्मसात कर सकें। गांधीजी ने *नई तालीम* पद्धति में श्रम, आत्मनिर्भरता और सामाजिक सेवा को शिक्षा का अभिन्न हिस्सा बनाया, ताकि छात्र केवल अच्छे विचारों के धारक न बनें, बल्कि अच्छे कर्मों के अभ्यासकर्ता भी बनें।

व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में गांधीजी का मानना था कि शिक्षा व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक सभी पक्षों को संतुलित रूप से विकसित करे। इसके लिए उन्होंने रचनात्मक कार्य, सामूहिक गतिविधियां, हस्तकला, स्वच्छता, खेलकूद, और सामुदायिक सेवा को शिक्षा का अनिवार्य भाग माना। गांधीजी का यह भी विश्वास था कि शिक्षा से आत्मविश्वास, नेतृत्व क्षमता और समाज में सकारात्मक योगदान देने की प्रवृत्ति विकसित होती है।

गांधी जी के अनुसार जीवन में शिक्षा के महत्व को हम निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत समझ सकते हैं

- **नैतिक मूल्यों का विकास** – शिक्षा सत्य, अहिंसा, ईमानदारी, करुणा, अनुशासन और सेवा-भाव जैसे गुणों को बढ़ावा देती है।
- **व्यवहार में सुधार** – शिक्षा विद्यार्थियों को सही और गलत का विवेक देती है और उनके आचरण में नैतिकता लाती है।
- **आत्मविश्वास और नेतृत्व क्षमता** – शिक्षा आत्मविश्वास पैदा करती है और नेतृत्व गुणों का विकास करती है, जिससे व्यक्ति समाज में सकारात्मक भूमिका निभा सके।
- **संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास** – शिक्षा शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक सभी पहलुओं को संतुलित रूप से विकसित करती है।
- **आत्मनिर्भरता** – गांधीजी की *नई तालीम* के अनुसार शिक्षा व्यक्ति को श्रम से जोड़कर आत्मनिर्भर और आत्मसम्मानी बनाती है।

© 2025 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

- **सामाजिक उत्तरदायित्व** – शिक्षा से व्यक्ति में समाज के प्रति जिम्मेदारी और योगदान देने की भावना विकसित होती है।
- **सकारात्मक दृष्टिकोण** – शिक्षा जीवन के प्रति आशावादी और रचनात्मक सोच पैदा करती है।
- **नैतिक कर्म की आदत** – शिक्षा केवल विचारों में नहीं, बल्कि कर्म में भी नैतिकता अपनाने की प्रेरणा देती है।
- **सामुदायिक सहयोग** – शिक्षा विद्यार्थियों में सहयोग, सहिष्णुता और टीमवर्क की आदत विकसित करती है।
- **प्रेरणादायी नागरिक निर्माण** – शिक्षा ऐसा नागरिक तैयार करती है जो अपने चरित्र और व्यक्तित्व से समाज के लिए प्रेरणा बन सके।

निष्कर्ष

महात्मा गांधी के सामाजिक चिंतन में शिक्षा का स्वरूप और उद्देश्य व्यक्ति तथा समाज, दोनों के सर्वांगीण विकास की दिशा में एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। गांधीजी ने स्पष्ट किया कि शिक्षा केवल जानकारी या डिग्री प्राप्त करने का साधन नहीं, बल्कि यह नैतिक मूल्यों, आत्मनिर्भरता, सेवा-भावना और सामाजिक जिम्मेदारी के विकास का माध्यम है। उनकी 'नई तालीम' की अवधारणा ने शिक्षा को जीवनोपयोगी कार्यों, श्रम और उत्पादन से जोड़कर इसे व्यावहारिक और समाजोपयोगी बनाया। उन्होंने मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा, श्रम की गरिमा, ग्राम स्वराज के अनुरूप कौशल विकास, तथा नैतिकता के संवर्धन को शिक्षा के मूल घटक के रूप में स्थापित किया। गांधीजी के अनुसार, शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य समानता, भाईचारे और सामाजिक समरसता की स्थापना है, जबकि आर्थिक उद्देश्य व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाकर समाज की उत्पादन क्षमता और आर्थिक सशक्तिकरण में योगदान देना है। आज के समय में, जब शिक्षा अक्सर रोजगार-उन्मुख होकर मानवीय और नैतिक पहलुओं की उपेक्षा कर रही है, गांधीजी का शिक्षा-दर्शन हमें याद दिलाता है कि शिक्षा का असली लक्ष्य एक ऐसे समाज का निर्माण करना है जो न्याय, शांति, सहयोग और सतत विकास के मूल्यों पर आधारित हो। इस प्रकार, गांधीवादी शिक्षा-दृष्टि वर्तमान और भविष्य, दोनों के लिए प्रेरणास्रोत है, जो व्यक्ति और समाज को एक साथ सशक्त और संवेदनशील बनाने का मार्ग प्रदान करती है।

संदर्भ सूची

महादेव भाई, डायरी भाग-2, 21 नवम्बर, 1932, पृ0 217

हरिजन सेवक, 29 फरवरी, 1936

बापू के पत्रः सरदार बल्लभ भाई के नाम 24 दिसम्बर, 1946

हरिजन, 1 सितम्बर 1940, पृ0 266

परेल, ए. जे. (1997). गांधी: हिंद स्वराज और अन्य रचनाएँ, कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

ब्राउन, जे. एम. (1991). गांधी: आशा का कैदी, न्यू हेवन: येल यूनिवर्सिटी प्रेस।

© 2025 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

अय्यर, आर. एन. (1993). महात्मा गांधी के नैतिक और राजनीतिक विचार, ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

डाल्टन, डी. (1993). महात्मा गांधी: क्रिया में अहिंसक शक्ति, न्यूयॉर्क: कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस।

नंदा, बी. आर. (1995). महात्मा गांधी: एक जीवनी, दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

पारेख, बी. (2001). गांधी: एक अति संक्षिप्त परिचय, ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

हार्डिमैन, डी. (2003). गांधी अपने समय और हमारे समय में उनके विचारों की वैश्विक विरासत, लंदन: हर्स्ट एंड कंपनी।

चटर्जी, पी. (1986). राष्ट्रवादी विचार और औपनिवेशिक विश्व. दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

© 2025 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com